विश्ववन्द्य स्वामी शिवानन्द महाराज

दिव्य जीवन संघ (*Divine Life Society*)
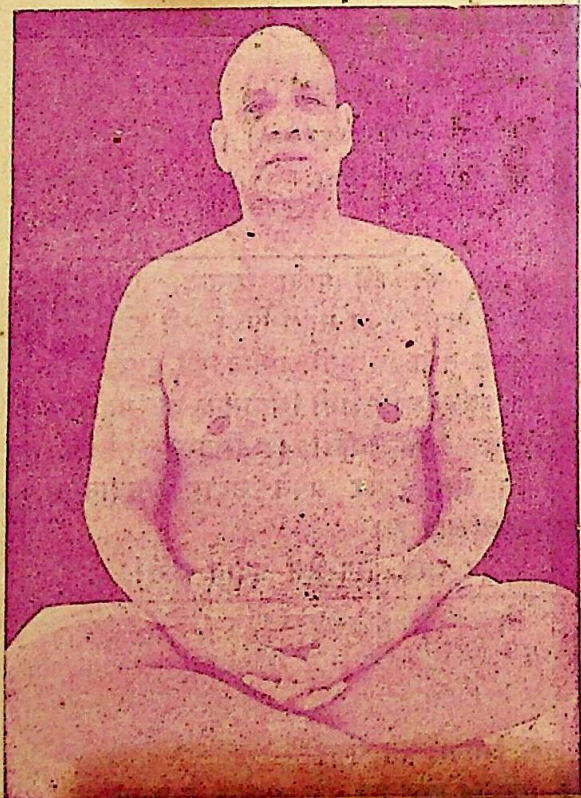
स्वामी शिवानन्द सरस्वती

जन्म : ८ सितम्बर १८८७, महासमाधि : १४ जुलाई १९६३

डिवाइन लाइफ सोसाइटी पब्लीकेशन

डिवाइन लाइफ सोसाइटी के लिए श्री स्वामी कृष्णानन्द जी द्वारा प्रकाशित तथा उन्हीं के द्वारा [illegible] प्रेस, शिवानन्द नगर, जिला टिहरी-गढ़वाल, (यू.पी.), हिमालय में मुद्रित।

प्रथम संस्करण (हिन्दी)—१९६८

(प्रति १०००)

इस पुस्तक को श्री पुष्पा आनन्द, एम॰ए॰, देहरादून ने अपने पूज्य माता-पिता, श्री रामरखामल आनन्द तथा श्रीमती आनन्द की पुण्य स्मृति में परम पूज्य श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की ८१ वीं जन्म-जयन्ती (८ सितम्बर १९६८) के पावन अवसर पर अपने उदार धर्मदान से प्रकाशित कराया है।

ईश्वर उन्हें योग-क्षेम प्रदान करें!

पुस्तक मिलने का पता—

डिवाइन लाइफ सोसाइटी,

शिवानन्द पब्लीकेशन लीग,

पो॰ शिवानन्दनगर,

जिला टिहरी-गढ़वाल, (यू.पी.), हिमालय।

शिवानन्द—मानव रूप में एक अति-मानव

(संक्षिप्त जीवन-वृत्त)

बहुत वर्ष पहले की बात है कि दक्षिण भारत में एक विद्वान् पुरुष रहते थे जिनका नाम था अप्पय दीक्षितार। वे केवल वेद एवं शास्त्रों में ही पारङ्गत नहीं थे वरन् ईश्वर के बहुत बड़े भक्त भी थे। उन्हें चामत्कारिक सिद्धियाँ भी प्राप्त थीं। उन्होंने संस्कृत में बहुत सी पुस्तकें लिखीं। यद्यपि बहुत से राजाओं के दरबार में उन्हें सम्मान प्राप्त था फिर भी वे नम्रता तथा भक्ति से परिपूर्ण थे।

उनके वंश में बहुत से साधुओं ने जन्म लिया। उसी वंश में गत शताब्दी में दक्षिण भारत के पट्टामडाई नामक स्थान में एक धर्म-परायण ब्राह्मण—वेंगु अय्यर हुए। वे तथा उनकी धर्म-पत्नी पार्वती अम्माल आदर्श जीवन व्यतीत करते थे। अपनी दैनिक पूजा में वेंगु अय्यर कभी-कभी भाव-समाधि में चले जाते थे। भगवान् शिव की पूजा करते समय उनके नेत्रों से आँसुओं की धारा बह निकलती थी। ये सब भक्ति की उन्नतावस्था के लक्षण थे।

८ सितम्बर १८८७ को इस भक्त दम्पति को एक पुत्र-रत्न की प्राप्ति हुई। उन लोगों ने उनका नाम कुप्पूस्वामी रखा। वे उनके सब से अन्तिम पुत्र थे। अतः वे उनको बहुत प्यार करते थे। वे उन्हें भगवान् का वरदान समझते थे और बहुत ही

शीघ्र वह वैसा निकले भी। बाल्यावस्था में ही वे अपने पिता की भगवत्पूजा में बहुत दिलचस्पी रखा करते थे। वे पूजा के लिए फूलों को एकत्र करते। वे बहुत ही कौतुकी थे परन्तु थे बहुत ही सुशील; यही था उनकी होनहारिता का परिचायक।

कुप्पूस्वामी वीर तथा विनम्र, स्वतन्त्र किन्तु आज्ञाकारी, दृढ़ परन्तु प्रिय थे। स्कूल के सब से मजबूत एवं शक्तिमान् लड़कों में उनकी गणना थी तथा उनके साथी उनके ज्ञान को देख उनका सम्मान किया करते थे। वे उनकी समस्याओं का समाधान बतलाते तथा उनके झगड़ों का समझौता करवाते थे। वे उनके नेता थे। वे स्कूल के सभी सामाजिक कार्यों में भाग लेते थे। एक बार उन्होंने स्कूल-ड्रामा में भी भाग लिया था और गवर्नर के प्रति स्वागत-गान गाया था। लजालू स्वभाव तो उनमें था ही नहीं। वे बहुत अच्छे कसरती भी थे। वे अपने शिक्षकों के समान ही बार (bar) की कसरतों को किया करते थे।

कॉलेज में प्रवेश करने के बाद उन्हें अपने भविष्य का चुनाव करना पड़ा। वे सेवा करना बहुत ही पसन्द करते थे। उस समय भी वे प्रेम-पूर्वक सेवा किया करते थे। अतः उन्होंने अपने लिए डाक्टरी शिक्षा वरण की। वे अपने अध्ययन में बहुत दिलचस्पी लेते थे और अपने पाठों को बहुत पसन्द करते थे। अतः वे अपनी कक्षा में सर्व-प्रथम

छात्र थे। वे अपने पाठों पर तो अधिकार जमा ही लेते थे, साथ ही दो वर्ष बाद पढ़ाये जाने वाले विषयों को भी वे पढ़ लेते थे। उनके अध्यवसाय से सारे शिक्षक उनके प्रति प्रसन्न रहते थे। वे उन सबों का सम्मान करते तथा उनकी सेवा करते थे। यह गुण उनमें इतना प्रखर था कि निष्ठावान् ब्राह्मण कुल में उत्पन्न होने पर भी उन्होंने जब एक निम्न-जाति के मनुष्य से घेरा डालने की कला सीखी तो उन्होंने उसे माला पहनायी थी तथा उसकी पूजा की थी।

बचपन से ही उनका स्वभाव उदार था। जब उन्हें मिठाई मिलती तो वे उसे अपने लिए बचा कर नहीं रखते थे। उसे अवश्य ही बाँट देते। यही कारण था कि युवावस्था में भी वे डाक्टरी विद्या, स्वास्थ्य तथा आरोग्य सम्बन्धी नियमों की विद्या को अपने ही पास नहीं रख सके। उन्हें तो उसका भी वितरण करना ही था। युवा डाक्टर कुप्पूस्वामी ने एक पत्रिका प्रकाशित करनी शुरू की जिसका नाम था—'अम्ब्रोसिया'! वह पाठकों के लिए अमृत के ही समान उपयोगी थी। उसके मुख पृष्ठ पर एक हृष्ट-पुष्ट व्यक्ति का चित्र रहता था। वे चाहते थे कि सभी मनुष्य हृष्ट-पुष्ट बनें। वे अपनी आय की परवा नहीं करते थे, परन्तु चाहते थे कि प्रत्येक मनुष्य नीरोग हो, स्वयं अपना डाक्टर बने।

डा० कुप्पूस्वामी ने मलाया के लोगों के दुःखों

के बारे में सुन रखा था। समुद्र पार करना तत्कालीन परम्परा के विरुद्ध था। फिर भी उन्होंने वहां जानेका निश्चय किया। वे धार्मिक थे, परन्तु अन्धविश्वासी नहीं; धर्मपरायण थे, परन्तु रिवाजों का अन्धानुकरण नहीं करते थे।

मलाया में डाक्टर कुप्पूस्वामी ने लोगों की जैसी सेवा की, वैसी सेवा अब तक वहां किसी ने नहीं की थी। निःसन्देह उन्हें बहुत रुपए प्राप्त होते थे; परन्तु वे एक दिन भी उनके पास नहीं ठहर पाते थे। धन उनके हाथों से प्रवाहित होता रहता था। सेवा के उनके अपने आदर्श थे। वे रोगी का उपचार करते, उसे निःशुल्क औषधियां देते और यदि वह गरीब होता तो उसे भोजन भी देते थे। ऐसी दयालुता वहां अज्ञात थी। उनका यश फैल चला। साथ ही साथ उनका खर्च भी बढ़ चला। वे बहुत सी धार्मिक पुस्तकें पढ़ा करते थे। अतः ज्ञान भी उनके अन्दर विकसित हो चला।

१९२३ ई० में संसार का परित्याग करने की उन्हें ईश्वरीय प्रेरणा मिली। एक कलम का परित्याग करना कितना कठिन है! एक सुन्दर शय्या का परित्याग कर एक दिन भी कठोर बिछावन पर सोना कितना कठिन है! परन्तु हमारे डा० कुप्पूस्वामी ने अपनी सारी सम्पत्ति मलाया की गरीब जनता में बांट कर भारत लौट आये। उनके पास एक छोटी थैली में एक कमीज और

एक धोती मात्र थी। उन्होंने बनारस का एक रेलवे टिकट लिया। जो कुछ भी धन बच रहा था उसे गरीबों को दे डाला। इस प्रकार वे बनारस पहुँचें। अब ईश्वरीय कृपा ही परम सम्पत्ति के रूप में उनके पास बच रही थी। यह विधि की कैसी विडम्बना कि जिस डाक्टर ने मलाया में सहस्रों को भोजन, वस्त्र तथा आश्रय प्रदान किया था उसे ही भोजन के लिए भिक्षा माँगनी पड़ी, चिथड़ों में रहना पड़ा तथा मन्दिर अथवा धर्मशाला में रातें बितानी पड़ीं। परन्तु उसने इन सबों को प्रसन्नता पूर्वक सहन किया।

तदनन्तर वे कुछ दिनों तक महाराष्ट्र देश में घूमते रहे। इन्हीं दिनों उन्होंने एक पोस्टमास्टर की भी सेवा की। जिसके पास अपना रसोइया था, आधे दर्जन नौकर थे, उसे स्वयं पोस्टमास्टर की सेवा करनी पड़ी। इस पोस्टमास्टर ने अन्ततः उन्हें ऋषिकेश के बारे में बताया तथा वहाँ उनके जाने की व्यवस्था भी कर दी।

१९२३ के प्रारम्भ में ही डा० कुप्पूस्वामी ऋषिकेश पहुँचे। वे एक आध्यात्मिक गुरु को प्राप्त करने के लिए बहुत ही उत्सुक थे। उनकी इच्छा थी किसी विजन स्थान में जाकर ईश्वर-नाम का गायन तथा ईश्वर का ध्यान करने की। शीघ्र ही उन्हें गुरु की प्राप्ति हुई। वे थे शृङ्गेरी मठ के श्री स्वामी विश्वानन्द सरस्वती। गुरु इस महान् शिष्य को पाकर बहुत प्रसन्न हुए। विश्वानन्द जी ने उन्हें

संन्यास दीक्षा दी तथा स्वामी शिवानन्द सरस्वती नाम प्रदान किया। बाद के सात वर्षों तक स्वामी शिवानन्द जी कठोर तपस्या में रत रहे। यदि आप उनकी साधनाओं को सुनें तो अवश्य ही अवाक् एवं विस्मित रह जायँगे। वे भिक्षा पर जीवन निर्वाह करते थे। दाल-रोटी के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं मिलता था। कभी-कभी तो बिना भिक्षा के भी रहना पड़ता था। वे प्राय: अपने कुटीर के किसी कोने में कुछ रोटियों को रख छोड़ते और कई दिनों तक उसी पर निर्वाह करते और इस प्रकार कुटीर के भीतर ही रहकर साधना में रत रहते। सूखी रोटी पानी में भिगोकर खाते थे। दूध तो बड़े भाग्य की वस्तु थी। मिष्ठान्न तथा स्वादिष्ट चीजें अज्ञात थीं। एक बार कुछ भक्तों ने उन्हें दूध के लिए कुछ रुपये दिए तो स्वामी जी ने झट उन रुपयों को एक पत्रिका को छपवाने में व्यय कर डाला। उन्हें अपने लिए दूध नहीं चाहिए था। वे तो सहस्रों को ज्ञान का दूध प्रदान करना चाहते थे।

अपने साधना-काल में भी वे रोगियों एवं कष्ट-पीड़ितों की सेवा करते थे। उन्होंने एक छोटे अस्पताल की भी स्थापना की। पास-पड़ोस में वे बहुत विख्यात हो गए; क्योंकि वे संक्रामक बीमारियों में भी सेवा करने की हिम्मत न हारते थे। उनके हाथों में दिव्य शक्ति थी। उनकी दृष्टिमात्र से ही रोगी चङ्गा एवं प्रसन्न हो जाता था।

इसके बाद उन्होंने जो कुछ किया वह और

भी अपूर्व था। बिना माँगे ही उन्हें मलाया से इन्श्योरेंस के रुपए मिले। कोई साधारण व्यक्ति होता तो वह अवश्य ही उन रुपयों को अपने आराम के साधनों में लगाने के लिए लालायित हो उठता; परन्तु उनकी बात दूसरी थी। उन्होंने उन रुपयों को बैंक में जमा कर दिया। उस रुपये से जो व्याज मिलता उससे वे दूध, फल तथा दही खरीदते—अपने लिए नहीं वरन् उन साधु-संन्यासियों के लिए जो रोगी थे। वे स्वयं नित्य-प्रति सूखी रोटी खाते और दूध तथा फलों को साधुओं में वितरण के लिए ले जाते—ऐसी थी उनकी करुणा और ऐसा था उनका संन्यास।

प्रेम में एक चुम्बकीय शक्ति होती है। यह सबों को अपनी ओर आकर्षित करता है। स्वामी जी के सेवा-कार्य तथा तपस् एवं ध्यान ने उन्हें आध्यात्मिक ज्ञान तथा शक्ति प्रदान किया था। लोग दर्शन तथा आशीर्वाद के लिए उनके पास आने लगे। भारत के नगरों तथा शहरों में यात्रा करने के लिए भी उनको निमन्त्रित किया जाता। वे अक्सर यात्रा के लिए जाते थे। ईश्वर का नाम गाते, कीर्तन करते, प्रवचन देते, योगासनों का प्रदर्शन करते, विद्यार्थियों को शिक्षित करते तथा सहस्रों को आध्यात्मिक परामर्श प्रदान करते थे।

उनके लेखों, वार्त्ताओं तथा पत्रों से लोग बहुत ही अनुप्राणित हुए। लोगों को यह अवगत हुआ कि वे ईश्वरीय व्यक्ति हैं, आत्म-साक्षात्कार-प्राप्त ऋषि हैं। वे उनके पास बड़ी से बड़ी संख्या में आने लगे।

कई युवक संसार का परित्याग कर उनके शिष्य बन गए। उनके सन्निकट आश्रम का विकास होने लगा। तब १९३६ में उन्होंने 'दिव्य-जीवन-संघ' (Divine Life Society) की स्थापना की।

१९३६ से जिस दिव्य-जीवन-युग—दिव्य-जीवन-शताब्दी—का प्रारम्भ हुआ उससे लाखों का कल्याण हुआ है। यह मनुष्य-हृदय के शुद्धीकरण का युग है। यह सहस्रों मनुष्यों के जीवन-परिवर्तन का युग है। शिवानन्द-संवत् का प्रारम्भ सार्वभौमिक धर्म के पुनरुद्धार का प्रारम्भ है। दिव्य-जीवन संघ के सन्देश विश्व के सभी भागों में ध्वनित एवं प्रतिध्वनित हो रहे हैं। सत्य, प्रेम तथा सात्विकता का साम्राज्य अधिकाधिक हृदयों में स्थापित होता जा रहा है। दिव्य जीवन के ये ही आदर्श वाक्य हैं : सेवा, प्रेम, ध्यान, साक्षात्कार।

स्वामी जी के सन्देश का प्रभाव आज पत्र, पत्रिकाओं, पुस्तक तथा पुस्तिकाओं के माध्यम से समस्त संसार में फैल चुका है। स्वामी जी २०० से अधिक पुस्तकों के विख्यात लेखक हैं। दिव्य-जीवन-संघ की ३०० से अधिक शाखाएं विश्व में फैल चुकी हैं।

संघ के मुख्य केन्द्र में शिवानन्दाश्रम एक बड़ी संस्था में परिणत हो चुका है। साधकों को साधना-सम्बन्धी शिक्षा देने के लिए स्वामी जी ने १९४८ में योग-वेदान्त-आरण्य अकादमी की स्थापना की। विश्व के सभी भागों से लोग आकर यहाँ योग और

वेदान्त की शिक्षा ग्रहण करते हैं। बहुत से स्कूल तथा कालेज के विद्यार्थी गर्मियों की छुट्टी आश्रम में ही बिताते हैं।

१९५० में स्वामी जी ने दो महीने के लिए भारत तथा लङ्का की यात्रा की थी। उन्होंने बड़े-बड़े नगरों में भाषण दिए, सारे भारत में भगन्नाम तथा दिव्य-जीवन संघ के सन्देश का प्रचार किया। लाखों ने स्वामी जी की पूजा की और उनका प्रवचन सुना। वह एक ऐतिहासिक घटना थी।

१९५३ में स्वामी जी ने ऋषिकेश में विश्व-धर्म-सम्मेलन बुलाया, जिसमें विश्व के सारे भागों से प्रतिनिधिगण पधारे थे। अनेक धर्मों के नेताओं ने स्वामी जी के नेतृत्व में सारे धर्मों के मौलिक एकता की घोषणा की। यह एक दूसरी ऐतिहासिक घटना थी।

गङ्गा के किनारे विजन कुटी में बैठ कर इस पावन महर्षि ने, जिन्हें लोग ईश्वर का अवतार मानते हैं, समस्त संसार में सुख का सञ्चार किया है। आज योरोप तथा अमरीका में सहस्रों लोग उनके सन्देशों को पढ़ते हैं। उनकी पुस्तकें प्रायः सभी भारतीय तथा योरोपीय भाषाओं में अनूदित हो चुकी हैं।

उनके इस अपूर्व व्यक्तित्व एवं गुणों से प्रभावित होकर भारत के राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद, डा० राधाकृष्णन, जेनरल करियप्पा तथा केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों के अधिकांश मन्त्रियों और

राज्यपालों ने उनके जीवन-काल में उनका दर्शन कर उनके आशीर्वाद एवं उपदेश प्राप्त किये। विदेशों के कितने ही राजदूत अपनी-अपनी भाव-भरी श्रद्धांजलिया अर्पित करने के लिए स्वयं शिवानन्द आश्रम की यात्राएं की और शान्ति, सन्देश तथा प्रेरणा प्राप्त की।

श्रद्धेय श्री स्वामी जी ने अपनी इहलौकिक लीला का संवरण १४ जुलाई सन् १९६३ को किया।

दिव्य जीवन संघ
DIVINE LIFE SOCIETY
तथा शिवानन्दाश्रम

दिव्य जीवन क्या है ?

दिव्य-जीवन हमारे ऋषि-महर्षियों की ही एक देन है। प्राचीन काल से ही भारतवासियों का आदर्श दिव्य-जीवन यापन करना रहा है। यह दिव्य जीवन मरने के बाद या किसी सुदूर भविष्य की वस्तु नहीं बल्कि हमारे दिन-प्रतिदिन का क्षण-प्रतिक्षण का जीवन ही समुचित दृष्टिकोण होने से दिव्य-जीवन हो जाता है। यही हम सबों के जीवन का लक्ष्य है।

ईश्वर से तादात्म्य होकर रहने को ही दिव्य-जीवन कहते हैं। अणु-अणु में उस प्रभु की उपस्थिति का अनुभव करना, क्षण-क्षण उसकी ही लीला को निरखना और प्रतिपल उसकी ही इच्छा के अनुकूल जीवन बिताने को कटिबद्ध रहना ही

दिव्य-जीवन है। ईश्वर की उपस्थिति, विश्व-चेतना या एकता के अनुभव में जो आनन्द होता है वह विषयानन्द से कई गुना अधिक है और केवल अनुभव का ही विषय है। अतः शब्दों में नहीं व्यक्त किया जा सकता। उस आनन्द को अनुभव करते हुए ही जीवन की क्रिया करते जाना ही दिव्य-जीवन है। उस आनन्द के अनुभव से व्यवहार या कर्म सरल हो जाता है; भय, दुविधा, शोक तथा दुःख सदा को छूट जाते हैं। फिर और कुछ भी प्रयास के योग्य नहीं रह जाता है।

हमारे जीवन का सब से प्रमुख कर्तव्य इसी स्थिति को पा लेना है। हमने यह शरीर इसी हेतु धारण किया है। हमारे कल्याण के लिए संसार में इससे अधिक उपयोगी और कोई प्रयत्न नहीं है। इसी प्रयत्न को योग कहते हैं। इसी प्रयत्न की विधियाँ अनेकों धर्मों में कही गई हैं। सभ्यता के आद्यकाल से ही अनेकों महापुरुष इस एक रहस्य का उद्घाटन देश, काल, संस्कृति, जाति और समाज के अनुकूल अनेक भाषाओं में, अनेक विधियों से करते आये हैं। इसी दिव्य-जीवन के रहस्य को हमें भी समझना और उसे अपने जीवन का अङ्ग बनाना है।

सृष्टि के क्रम में, मोह के आवरण से इस दिव्य-जीवन की प्रभा क्रमशः धूमिल हो जाया करती है और वैसे समय में ईश्वर अपने विशेष अंश से मानव-कल्याण के लिए इसको फिर नवीन

रूप से कहा करते हैं। भारतवर्ष भी वैसे ही एक समय से गुजर रहा था और यहाँ भी उस दिव्य-जीवन को, प्राचीन योग को, नवीन रीति से प्रस्फुटित करने की आवश्यकता थी। इस आवश्यकता की पूर्ति स्वामी शिवानन्द के लेखों से हुई है।

हर परिस्थिति के लोग बच्चे-बूढ़े, स्त्री-पुरुष, विद्वान्-मूर्ख, उनके उपदेशों से लाभ उठा कर दिव्य-जीवन की ओर बढ़ सकते हैं। यथार्थ में ईश्वर की ओर बढ़ने का हर किसी का कर्त्तव्य ही नहीं, हर किसी का हक़ है। प्रत्येक व्यक्ति का मार्ग कुछ अपने ढंग का होगा। यद्यपि सबों का लक्ष्य एक है फिर भी शारीरिक और मानसिक क्षमता के अनुकूल सबको अपने ढंग से ईश्वर की स्मृति को अपने जीवन में लाना है। इसीलिए भक्ति, योग और ज्ञान के समन्वय की आवश्यकता है। यही योग-समन्वय आज की दुनियाँ को स्वामी शिवानन्द के ग्रन्थ सिखलाते हैं।

संसार के अनेक धर्मों के अनेक मत हैं। सबों का मूल प्रार्थना, उपवास, दान और तीर्थादि में है और वातावरण के अनुकूल इनके अनेक ढंग कहे गये हैं। इन सबों का लक्ष्य मानव के हृदय और मस्तिष्क का विकास करना ही रहा है। अनेक धर्मावलम्बी अपने स्वार्थ और अहंकार के वशीभूत हो, फिर भी विरोध करते रहे हैं। स्वामी शिवानन्द के लेखों में इस विरोध का निराकरण किया गया है और संसार भर के लोगों के लिए धर्म के

मूल रहस्यों को इस रीति से कहा गया है कि उससे सभी देश और सभी धर्मों के लोग लाभ उठा सकते हैं।

दिव्य-जीवन के मूल सिद्धान्तों के प्रचार के लिए स्वामी जी ने दिव्य-जीवन संघ को स्थापित किया। आज उसकी चार सौ से अधिक शाखाएं इस देश और विदेशों में प्रचार कार्य कर रही हैं। संसार के अधिकतर देशों में दिव्य-जीवन की शाखाएं खुल चुकी हैं और सच्चे साधक इसकी महत्ता को क्रमशः आंकने लगे हैं।

भारत बराबर धर्म-प्रधान देश रहा है। यहाँ अनेकों ऋषि-महर्षि और महात्मा होते रहे हैं। फिर भी यहाँ अनेकों कुरीतियाँ, अनेकों रूढ़ियाँ भी रही हैं। आज भी हममें से बहुसंख्यक लोग अपने को रूढ़ियों में सीमित कर दिव्य-जीवन के सन्मार्ग को पकड़ने से वंचित रहते हैं। पश्चिम के विज्ञान-वाद और साम्यवाद का प्रवाह तथा अर्थवाद की चमक हमें इतना ग्रस्त रहा है कि हम अपनी सभ्यता के मौलिक लक्ष्य को भूल रहे हैं या उससे हमारी अश्रद्धा हो रही है। इन सब दोषों का निराकरण दिव्य-जीवन के उपदेशों पर चलकर ही कर सकते हैं। यदि हमें अपना और इस देश का भविष्य उज्ज्वल बनाना है, यदि यहाँ रामराज्य लाना है, यदि हमें सब धर्मों की एकता करनी है तो सच्चे दिल से दिव्य-जीवन को अपना कर ही कर सकते हैं।

शिवानन्द आश्रम और उसकी विभिन्न प्रवृत्तियाँ

यह आश्रम ही विश्ववन्द्य स्वामी शिवानन्द की तपस्थली तथा दिव्य-जीवन संघ का प्रमुख केन्द्र है। यह उत्तराखण्ड में उस मनोरम तथा शान्त-एकान्त स्थल पर अवस्थित है जहाँ दोनों ओर नगाधिराज हिमालय की पर्वत मालाएं हैं और मध्य में कल-कल निनाद करती दुग्ध-फेन-सी गङ्गा की अमृत-मय धारा प्रवाहित होती है। यह आश्रम ऋषिकेश स्टेशन से दो मील पर, गङ्गाके दायें पार्श्व पर बद्री-केदार मार्ग पर स्थित है। यहाँ का चतुर्दिक वातावरण इतना शान्त, शुचिपूर्ण, स्फूर्तिदायक और संस्कारमय है कि तत्काल ऐसी अनुभूति होने लगती है कि हम मर्त्यलोक से स्वर्गलोक में आ गये हैं। ऐसे ही अनुपम वातावरण में सेवा, प्रेम, मनन और साक्षात्कार के निमित्त दिव्य-जीवन संघ तथा शिवानन्द आश्रम न केवल भारत का प्रमुख आध्यात्मिक केन्द्र है, अपितु विश्व में प्रसिद्ध साधना-स्थल के नाम से प्रख्यात है।

शिवानन्दाश्रम संन्यासियों का साधना-स्थल ही नहीं, एक मानव-हितकारी महान् रचनात्मक केन्द्र भी है। आश्रम की विभिन्न प्रवृत्तियाँ इस तथ्य की साक्षी हैं। यहाँ के भजन-हाल में चौबीसों घण्टे अखण्ड महामन्त्र-कीर्तन चलता रहता है। इसकी रजत-जयन्ती इसी वर्ष ३ दिसम्बर को

मनायी जा रही है। योगकक्ष में साधक योग की शिक्षा-साधना करते हैं। यहाँ एक प्रदर्शन-कक्ष भी है जहाँ चित्रों और मानचित्रों में योग-साधना के महत्व तथा रहस्य को समझाया गया है। कैवल्य गुहा वह स्थान है जहाँ स्वामी शिवानन्द जी स्वयं योग-साधना करते थे और विशिष्ट जिज्ञासुओं को योग की शिक्षा देते थे। शिवानन्द आश्रम और दिव्य-जीवन संघ के कार्यालय से न केवल आश्रम का, अपितु संसार के विभिन्न भागों में फैली शाखाओं का संचालन होता है।

शिवानन्द आयुर्वेदिक फार्मेसी में हिमालय की जड़ी-बूटियों से अनुभवी आचार्यों के निरीक्षण में औषध-निर्माण का कार्य होता है। इस आश्रम में एक औषधालय भी है और एक नेत्र-चिकित्सालय भी, जहाँ नित्य सैकड़ों रोगी आस-पास के गाँवों से आते हैं। इसमें एक्स-रे, औषध-निर्माण तथा रोग-परीक्षण के आधुनिकतम यन्त्र हैं। रोगियों के निवास की भी व्यवस्था है। यहाँ आयुर्वेद, एलोपैथी, होमियोपैथी, आसन-प्राणायाम चिकित्सा और नाम-जप की विभिन्न प्रणालियों से निःशुल्क चिकित्सा की जाती है।

योग-वेदान्त आरण्य अकादमी आश्रम का हृदय-स्थल है। मानव-सेवा और आध्यात्मिकता के प्रचार के लिए साधकों को कर्मयोग, भक्तियोग और ज्ञानयोग में पारंगत कर देश और विदेश के विभिन्न भागों में भेजना ही इस महाविद्यालय का

उद्देश्य है। इसकी स्थापना सन् १९४८ में स्वामी शिवानन्द जी ने की थी। योग, आसन, प्राणायाम और धार्मिक ग्रंथों की शिक्षा तथा अभ्यास के लिए आश्रम में व्यापक प्रबन्ध है। यहाँ एक विशाल पुस्तकालय भी है। आश्रम में पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन का बृहत् विभाग है। आश्रम का अपना निजी प्रेस है जो सभी आधुनिकतम साधनों से सम्पन्न है। यहाँ से अब तक हजारों पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। योग, धर्म, दर्शन, कर्तव्य-शास्त्र, उपनिषद् आदि आत्मोन्नति और जीवन-निर्माण सम्बन्धी सैकड़ों पुस्तकों का देश तथा विदेश की विभिन्न भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। अंग्रेजी, हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में मासिक पत्रिकाएं प्रकाशित होती हैं। इनमें अंग्रेजी के 'डिवाइन लाइफ' तथा हिन्दी के 'योग-वेदान्त' आदि पत्र विशेष उल्लेखनीय हैं। आश्रम से प्रतिवर्ष सहस्रों रुपये के मूल्य की पुस्तकें निर्मूल्य वितरित होती हैं। इससे सम्बद्ध फोटो-ग्राफी विभाग है, जहाँ आध्यात्मिक साधना तथा जीवन-निर्माण के चलचित्र और भजनों तथा उपदेशों के रेकार्ड निर्मित होते हैं। आश्रम में एक संगीत-विद्यालय भी है जिसमें भक्तिपूर्ण गीतों को शास्त्रीय विधि से गाने की शिक्षा दी जाती है।

आश्रम में इन विभिन्न प्रवृत्तियों और विभागों के अतिरिक्त मुख्य कार्यालय के ऊपर पर्वत-शृङ्खला पर ही एक सुन्दर विश्वनाथ-मन्दिर बना

हुआ है। पर्वतराज की सुरम्य बनस्थली के मध्य इस मन्दिर की स्थिति है, जो दर्शक को मुग्ध कर लेती है। इसका निर्माण सन् १९४३ में हुआ था। इसी के निकट एक यज्ञशाला भी है, जहाँ विश्व-शान्ति और मानव-कल्याण के लिए विशेष यज्ञ-यागादि होते रहते हैं। यहाँ नित्य प्राचीन वैदिक पद्धति से हवन-पूजन होता है। मन्दिर के वाम पार्श्व में स्वामी शिवानन्द जी महाराज का समाधि-मन्दिर है, जहाँ देश और विदेश के श्रद्धालु भक्तगण आकर आश्रम के संस्थापक, दिव्य-जीवन के प्रणेता तथा मानवता के उस महान् पुजारी के प्रति अपनी भावभरी श्रद्धांजलियाँ अर्पित करते हैं। यहाँ पर भी प्रतिदिन तीनों समय पूजा होती है और गुरुवार को विशेष रूप से पाद-पूजा की जाती है।

प्रारम्भ में तो आश्रम में थोड़े ही साधक रहते थे किन्तु अब साधु-संन्यासियों, साधकों, भक्तों एवं कर्मचारियों की संख्या दो सौ के लगभग हो गई है। आये दिन देश-विदेश के साधक आश्रम में आते रहते हैं और हिमालय के चरणों में स्थित इस आश्रम से उपदेश एवं प्रेरणा प्राप्त कर नयी शक्ति तथा स्फूर्ति प्राप्त करते हैं। युग के अनुरूप धर्म एवं अध्यात्म-प्रचार के निमित्त स्वामी शिवानन्द द्वारा स्थापित हिमालय का यह अध्यात्म-केन्द्र आज भारत का ही नहीं, विश्व का आकर्षण-केन्द्र बन गया है।

दिव्य जीवन संघ (Divine Life Society) की सदस्यता के नियम; आयुर्वेदिक फार्मेसी में निर्माण होने वाली औषधि; आसन, प्राणायामादि योग के विभिन्न अंग और उपांग, वेदान्त, संगीत तथा अन्य आध्यात्मिक विषयों की शिक्षा की व्यवस्था; योग, चिकित्सा, वेदान्त, संगीत तथा अन्य आध्यात्मिक विषयों पर प्रकाशित यहां का साहित्य तथा 'डिवाइन लाइफ' (अंग्रेजी) तथा 'योग-वेदान्त' (हिन्दी) की पत्रिका के विषय तथा मूल्य और श्री विश्वनाथ मन्दिर में सामूहिक तथा व्यक्तिगत नाम में की जाने वाली पूजा तथा अनुष्ठान आदि-आदि विषयों की विशेष जानकारी के लिए लिखें या मिलें—

मन्त्री,

डिवाइन लाइफ सोसाइटी

पोस्ट शिवानन्दनगर,

व ाया ऋषिकेश, उ०प्र०, हिमालय

—:o:—

ॐ

बीस आध्यात्मिक नियम

१. प्रातः चार बजे उठो। जप तथा ध्यान करो।

२. सात्त्विक आहार करो। पेट को उचित से अधिक मत भरो।

३. जप तथा ध्यान के लिए पद्म या सिद्ध आसन में बैठो।

४. ध्यान के लिए एक अलग कमरा ताले-कुञ्जी से बन्द कर रखो।

५. अपनी आय के दसवें हिस्से को दान दो।

६. भगवद्गीता के एक अध्याय को नियमित रूप से पढ़ो।

७. वीर्य की रक्षा करो। अलग-अलग सोओ।

८. धूम्रपान, उत्तेजक मदिरा तथा राजसिक भोजन का त्याग करो।

९. एकादशी को उपवास करो या केवल दूध या फल का आहार करो।

१०. नित्यप्रति दो घण्टे के लिए तथा खाते समय भी मौन का पालन करो।

११. हर हालत में सत्य बोलो। थोड़ा बोलो, मधुर बोलो।

१२. अपनी आवश्यकताओं को कम करो। सुखी तथा सन्तुष्ट जीवन बिताओ।

१३. दूसरों की भावनाओं पर आघात न पहुँचाओ। सबों के प्रति सदय बनो।

१४. अपनी गलतियों पर विचार करो। आत्म-विश्लेषण करो।

१५. नौकरों पर निर्भर मत रहो। आत्मनिर्भर बनो।

१६. प्रातः उठते ही तथा रात्रि को सोते समय ईश्वर का स्मरण करो।

१७. अपनी जेब या गले में एक माला रखो।

१८. सरल जीवन तथा उच्च विचार का आदर्श रखो।

१९. साधुओं, संन्यासियों तथा गरीब एवं रोगी व्यक्ति की सेवा करो!

२०. नियमित डायरी रखो। अपनी दिनचर्या का पालन करो।

इन बीस शिक्षाओं में ही योग और वेदान्त का सार निहित है। इनका अक्षरशः पालन कीजिए। अपने मन को ढील न दीजिए। आपको परमानन्द की प्राप्ति होगी।

—शिवानन्द

[illegible] कहो।

जिस हाल में, [illegible]
राधार[illegible] ।

जिस काम में, जिस धाम में, जिस ग्राम में रहो ;
राधारमण राधारमण राधारमण कहो ।

जिस रोग में, जिस भोग में, जिस योग में रहो ;
राधारमण राधारमण राधारमण कहो ।

जिस रंग में, जिस ढंग में, जिस संग में रहो ;
राधारमण राधारमण राधारमण कहो ।

प्रार्थना

हे प्रभो आनन्ददाता ज्ञान हमको दीजिए ।
शीघ्र सारे दुर्गुणों को दूर हमसे कीजिए ।।
लीजिए हमको शरण में हम सदाचारी बनें ।
ब्रह्मचारी, धर्मरक्षक, वीर, व्रतधारी बनें ।।
हे प्रभो आनन्ददाता..............

प्रेम से हम गुरुजनों की नित्य ही सेवा करें ।
सत्य बोलें, झूठ त्यागें, नेह आपस में करें ।।
निन्दा किसी की हम किसी से भूलकर भी ना करें ।
"दिव्य-जीवन" हो हमारा यश तेरा गाया करें ।।
हे प्रभो आनन्ददाता..............

विश्व-प्रार्थना

हे स्नेह और करुणा के आराध्य देव,
तुम्हें नमस्कार है, नमस्कार है।
तुम सच्चिदानन्दघन हो।
तुम सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान् और सर्वज्ञ हो।
तुम सबके अन्तर्वासी हो।
हमें उदारता, समदर्शिता और मन का समत्व प्रदान करो।
श्रद्धा, भक्ति और प्रज्ञा से कृतार्थ करो।
हमें आध्यात्मिक अन्तःशक्ति का वर दो
जिससे हम वासनाओं का दमन कर मनोजय को प्राप्त हों।
हम अहंकार, काम, लोभ और द्वेष से रहित हों।
हमारा हृदय दिव्य गुणों से पूर्ण करो।
सब नाम रूपों में तुम्हारा दर्शन करें।
तुम्हारी अर्चना के ही रूप में इन नाम रूपों की सेवा करें।
सदा तुम्हारा ही स्मरण करें।
केवल तुम्हारा ही कलिकल्मषहारी नाम हमारे
अधरपुट पर हो।
सदा हम तुममें ही निवास करें।

—स्वामी शिवानन्द

—:o:—